बोरपुखुरी टी इस्टेट प्रबंधन

बनाम

पीठासीन अधिकारी, औद्योगिक न्यायाधिकरण असम और अन्य

1 मार्च, 1978

[वी. आर. कृष्णा अय्यर और जसवंत सिंह, जे. जे.]

औद्योगिक विवाद अधिनियम, (अधिनियम XIV), 1947, धारा 33 (3) (बी)-लागू धारा को बदलने वाले आवेदन के संशोधन की अनुमति न्यायाधिकरणों द्वारा दी जानी चाहिए।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 (2) (बी) के तहत किसी सुलह अधिकारी या बोर्ड के समक्ष या किसी औद्योगिक विवाद के संबंध में मध्यस्थ या श्रम न्यायालय या न्यायाधिकरण या राष्ट्रीय न्यायाधिकरण के समक्ष किसी भी सुलह की कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, नियोक्ता संबंधित श्रमिकों को लागू स्थायी आदेशों के अनुसार, विवाद से जुड़े किसी भी कदाचार के लिए, निर्वहन या दंड के लिए, चाहे वह कर्मचारी बर्खास्तगी या अन्यथा हो, बशर्ते कि कर्मचारी को एक महीने के लिए उसका वेतन दिया गया हो और नियोक्ता द्वारा उस प्राधिकरण को आवेदन किया गया हो जिसके समक्ष कार्यवाही नियोक्ता द्वारा की गई कार्रवाई के अनुमोदन के लिए लंबित है। धारा 33 (3) (बी) के तहत, जो धारा 33 (2) को ओवरराइड करता है, कोई भी नियोक्ता, किसी औद्योगिक विवाद के संबंध में ऐसी किसी भी कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, ऐसे संरक्षित कर्मचारी के खिलाफ, उस प्राधिकरण की लिखित में स्पष्ट अनुमति के अलावा, जिसके समक्ष कार्यवाही लंबित है, निर्वहन या दंडित करके कोई कार्रवाई नहीं करता है, चाहे वह बर्खास्त हो या अन्यथा।

अपीलार्थी के प्रतिष्ठान के स्थायी आदेशों के क्लॉज़ 10 (ए) (2) के तहत गंभीर कदाचार के आरोप के संबंध में उनके द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में निहित पूछताछ अधिकारी के निष्कर्षों से सहमत होना, जैसा कि प्रत्यर्थी सं. 2, एक संरक्षित कर्मचारी, प्रबंधन ने उसे बर्खास्त करने का फैसला किया। उत्तरदाता नं. 2 एक कर्मचारी था और एक औद्योगिक विवाद संदर्भ सं 1964 का 35, गुवाहाटी में औद्योगिक न्यायाधिकरण, असम के समक्ष लंबित था, प्रबंधन प्रतिवादी को सीधे बर्खास्त नहीं कर सका। तदनुसार, 10 नवंबर, 1966 के अपने पत्र द्वारा, प्रबंधन ने प्रतिवादी नं. 2 कि वह 19 सितंबर, 1966 को उन पर लगाए गए आरोप पत्र में निहित आरोप के लिए दोषी पाया गया था और उन्हें कंपनी की सेवा से बर्खास्त कर दिया जाएगा, लेकिन अधिनियम की धारा 33 के तहत सक्षम प्राधिकारी के आदेश लंबित रहने तक सजा प्रभावी नहीं होगी और इस बीच, वह निलंबन के तहत रहेगा। उसी तारीख को, प्रबंधन-अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी नं. 1, अधिनियम की धारा 33 (2) के तहत उत्तरदाता नं. 2 17 नवंबर, 1976 के अपने पत्र द्वारा यह स्वीकार करते हुए कि उन्हें 10 नवंबर, 1966 के पत्र के अनुसार अभी तक बर्खास्त नहीं किया गया था, लेकिन केवल संबंधित प्राधिकरण के निर्णय तक बिना वेतन के निलंबन में रहना था, अपीलार्थी से अनुरोध किया कि वह उन्हें राशन (कर्मचारियों के राशन दर के अनुसार) लेने के विशेषाधिकार का लाभ उठाने और नियमों के अनुसार चाय और जलाऊ लकड़ी की मुफ्त आपूर्ति करने की अनुमति दे। इसके बाद, 24 दिसंबर, 1966 को प्रत्यर्थी ने औद्योगिक न्यायाधिकरण के समक्ष अधिनियम की धारा 33 ए के तहत एक शिकायत दायर की, जिसमें अपीलार्थी द्वारा अधिनियम की धारा 33 के प्रावधानों के उल्लंघन का आरोप लगाते हुए मामले में निर्णय के लिए प्रार्थना की गई। 27 जून, 1967 को, जब अधिनियम की धारा 33 (2) (बी) के तहत अपीलार्थी का मूल आवेदन अभी भी लंबित था, अपीलार्थी ने औद्योगिक न्यायाधिकरण में एक आवेदन किया जिसमें अनुरोध किया गया कि उक्त आवेदन को

अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के तहत एक के रूप में माना जाए। 10 जुलाई, 1967 के अपने आदेश के अनुसार, प्रत्यर्थी सं 1 ने अधिनियम की धारा 33 (2) के तहत प्रबंधन के मूल आवेदन को अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के तहत एक के रूप में मानने से इनकार कर दिया और इसे विचारणीय नहीं मानते हुए खारिज कर दिया कि प्रबंधन ने प्रतिवादी को बर्खास्त करने में अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन किया था, जो कि न्यायाधिकरण से अनुमति प्राप्त किए बिना एक संरक्षित कर्मचारी था। असम उच्च न्यायालय में अपीलार्थी द्वारा उक्त आदेशों पर आरोप लगाते हुए दायर रिट आवेदन को इस टिप्पणी के साथ खारिज कर दिया गया कि बर्खास्तगी की सजा अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के प्रावधानों का पालन किए बिना पहले ही दी जा चुकी है, इसलिए पूर्व पोस्ट फैक्टो अनुमति नहीं दी जा सकती है।

विशेष अनुमति द्वारा अपील की अनुमति देते हुए न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1. न्याय देने के कर्तव्य के लिए आरोपित न्यायालयों को यह याद रखना होगा कि यह मामले का रूप नहीं बल्कि सार है जिस पर गौर किया जाना चाहिए और पक्षकारों को उनके मामलों के संचालन में अनजाने में की गई त्रुटियों के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है। न्यायालयों के लिए यह याद रखना भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि न्याय को बढ़ावा देने के लिए कभी-कभी उचित मामलों में अभिवचनों का अर्थ बहुत अधिक तकनीकी या शैक्षणिक तरीके से नहीं बल्कि निष्पक्ष और यथोचित रूप से निकालना आवश्यक है। (444 एफ-जी)

वेस्टर्न इंडिया मैच कंपनी बनाम कामगार, [1963] 2 एलएलजे 459 पृष्ठ 464 पर आवेदन किया।

2. श्रम न्यायालय और न्यायाधिकरण पक्षकारों को अनुमति देने के लिए सक्षम हैं जब वे न्याय के हित को कम करने के लिए अपने अभिवचनों को संशोधित करने के लिए किसी भी अप्रत्यक्ष उद्देश्य से प्रेरित नहीं होते हैं। [445 ए]

पटना इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड पटना बनाम बाली बाई और अन्य [1958] एस. सी. आर. 871, इसके बाद आया।

3. वर्तमान मामले मेंः-(क) अपीलार्थी का मूल आवेदन, वास्तव में और अधिनियम की धारा 33 (3) के तहत अनुमति के लिए सार में है। न्यायाधिकरण को निम्नलिखित बिंदुओं पर जाने के बाद कानून के अनुरूप इसका निपटारा करना चाहिएः-

1. क्या यह निर्णायक रूप से साबित होता है कि उपरोक्त चेक संख्या 53 पर बोरपुखुरी टी एस्टेट के प्रबंधक के हस्ताक्षर नकली थे?

2. उस रिपोर्ट का क्या हुआ जो अपीलार्थी द्वारा उक्त चेक के संबंध में पुलिस को दी गई प्रतीत होती है और उस रिपोर्ट के परिणाम का कथित जालसाजी की सच्चाई या अन्यथा पर क्या प्रभाव पड़ता है?

3. क्या प्रत्यर्थी को बर्खास्त करने का प्रथम दृष्टया मामला अपीलार्थी द्वारा बनाया गया है?

4. क्या प्रत्यर्थी को बर्खास्त करने का अपीलार्थी का निर्णय प्रामाणिक था या यह किसी अनुचित श्रम प्रथा या उत्पीड़न का परिणाम था?

5. क्या प्रत्यर्थी जांच के समापन और न्यायाधिकरण के अंतिम आदेश के बीच के अंतराल में किसी भी भुगतान का हकदार था? [445 ए-ई]

[न्यायालय ने सुझाए गए बिंदुओं में जाने के बाद आदेश की प्राप्ति के छह महीने से अधिक के अधिकतम प्रेषण के साथ मामले का निपटारा करने के लिए आगे निर्देश दिए]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 1764/1971

(1967 के सिविल नियम संख्या 236 में गुवाहाटी में असम और नागालैंड उच्च न्यायालय के 18 सितंबर, 1970 के निर्णय और आदेश से विशेष अनुमति द्वारा अपील)

एफ. एस. नरीमन, पी. एच. पारेख और एस. एन. चौधरी अपीलार्थी के लिए।

प्रतिवादी संख्या 2 के लिए के. पी. गुप्ता और बी. बी. तवाकले।

पूर्व-पक्षः प्रत्यर्थी संख्या 1 के लिए।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति जसवंत सिंह द्वारा दिया गया था-

विशेष अनुमति द्वारा यह अपील वर्तमान अपीलार्थी द्वारा दायर 1967 के सिविल नियम संख्या 236 में पारित असम और नागालैंड उच्च न्यायालय के 18 सितंबर, 1970 के फैसले और आदेश के खिलाफ निर्देशित है।

इस अपील को जन्म देने वाले तथ्य इस प्रकार हैंः श्री नरेश कुमार गांगुली, प्रत्यर्थी संख्या 2 (इसके बाद 'प्रत्यर्थी' के रूप में संदर्भित), दूसरे क्लर्क के रूप में बिश्नौथ टी कंपनी लिमिटेड (जो चाय की खेती और निर्माण में लगी हुई है और अपने व्यवसाय को जारी रखने के लिए विभिन्न श्रेणियों के श्रमिकों की एक बड़ी संख्या को नियुक्त करती है) से संबंधित बोरपुखुरी टी एस्टेट में कार्यरत थे और उन्हें औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 33 (3) के अर्थ के भीतर 'संरक्षित कर्मचारी' के रूप में मान्यता दी गई थी। 11 सितंबर,

1966 को कंपनी का चेक संख्या 53, जिस पर कथित रूप से बोरपुखुरी टी एस्टेट के प्रबंधक के जाली हस्ताक्षर थे, एक स्थानीय बैंकर से भुनाया गया था। पूछताछ करने पर, कारखाने के चौकीदार, मानसिद मुंडा ने कहा कि चेक को प्रतिवादी के निर्देश पर नकद किया गया था और इसकी आय रु 680/- उद्यान कार्यालय में बाद वाले को सौंप दिए गए। चूंकि प्रत्यर्थी का कार्य प्रथम दृष्टया प्रतिष्ठान के स्थायी आदेशों के खंड 10 (ए) (2) के तहत एक गंभीर कदाचार था, इसलिए उन पर 19 सितंबर, 1966 को एक आरोप पत्र जारी किया गया था, जिसमें उन पर उपरोक्त चेक पर प्रबंधक के जाली हस्ताक्षर करके स्थानीय बैंकर से पैसा प्राप्त करने और उस संबंध में अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए कहने का आरोप लगाया गया था, जो उन्होंने 22 सितंबर, 1966 को किया था। चूंकि प्रत्यर्थी द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण (जो इनकार करने वाला था) असंतोषजनक पाया गया था, इसलिए कंपनी के अधीक्षक श्री आर. आर. एल. पेनोल द्वारा आरोप की जांच की गई। प्रतिवादी जो पूरी जांच के दौरान मौजूद था, उसे कंपनी की ओर से पेश किए गए गवाहों से जिरह करने और अपने बचाव में सबूत पेश करने का अवसर दिया गया था। जाँच के समापन पर, जाँच अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए कहा कि जाँच के दौरान प्रस्तुत सामग्री से साबित होता है कि प्रतिवादी स्थायी आदेश के उपरोक्त खंड द्वारा परिकल्पित गंभीर कदाचार का दोषी था इसलिए प्रबंधन ने प्रतिवादी को बर्खास्त करने का फैसला किया। चूंकि प्रतिवादी एक संरक्षित कर्मचारी था और एक औद्योगिक विवाद संदर्भ सं 1964 का 35, गुवाहाटी में औद्योगिक न्यायाधिकरण असम के समक्ष लंबित था, प्रबंधन प्रतिवादी को तुरंत खारिज नहीं कर सका। तदनुसार; 10 नवंबर, 1966 के अपने पत्र द्वारा, प्रबंधन ने प्रत्यर्थी को सूचित किया कि वह 19 सितंबर, 1966 को उस पर लगाए गए आरोप पत्र में निहित आरोप का दोषी पाया गया था और उसे कंपनी की सेवा से बर्खास्त कर दिया जाएगा, लेकिन अधिनियम की धारा 33 के तहत सक्षम प्राधिकारी के आदेशों के लंबित रहने तक सजा

को लागू नहीं किया जाएगा, और इस बीच वह निलंबन के तहत रहेगा। अपीलार्थी की ओर से प्रतिवादी को 10 नवंबर, 1966 को लिखा गया पत्र निम्नानुसार थाः -

"श्री एन. के. गांगुली,

द्वितीय क्लर्क,

बोरपुखुरी टी. ई.

पी. ओ. चराली।

प्रिय महोदय,

आपको एतद्द्वारा सूचित किया जाता है कि 19 सितंबर, 1966 के मेरे पत्र में आपको दिए गए आरोप के स्थायी आदेशों द्वारा निर्धारित आपके मामले की उचित सुनवाई के बाद आपको दोषी पाया गया है।

आपको तदनुसार सूचित किया जाता है कि आपको कंपनी की सेवा से बर्खास्त कर दिया जाएगा।

यह सजा औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 के तहत सक्षम प्राधिकारी के आदेशों के लंबित रहने तक लागू नहीं की जाएगी और इस बीच आप निलंबन में रहेंगे। जैसा कि आपके खिलाफ आरोप की मेरी जांच समाप्त हो गई है, आपको निलंबन की इस अवधि के दौरान कोई निर्वाह भत्ता नहीं मिलेगा।

आभारी

डब्ल्यू. पी. स्वेर

सहायक-प्रभारी"

उसी तारीख को प्रबंधन द्वारा पीठासीन अधिकारी, औद्योगिक न्यायाधिकरण, गुवाहाटी के समक्ष अधिनियम की धारा 33 (2) के तहत एक आवेदन किया गया था। 17 नवंबर, 1966 को प्रत्यर्थी ने बोरपुखुरी टी एस्टेट के प्रबंधक को निम्नलिखित संदेश संबोधित कियाः -

"प्रबंधक,

बोरपुखुरी टी एस्टेट,

चारैल पी. ओ.

सर,

मुझे आपके दिनांकित पत्र से ऐसा लगता है कि मुझे अभी तक बर्खास्त नहीं किया गया है, केवल मुझे बिना वेतन के निलंबन पर रहना है जब तक कि आपको प्राधिकरण से कोई निर्णय नहीं मिल जाता।

इसलिए, जैसा कि मुझे अभी तक बर्खास्त नहीं किया गया है, आप मुझे नीचे दी गई कंपनी के साथ किसी भी सेवा के संबंध में विशेषाधिकार का लाभ उठाने की अनुमति देंगे।

(1) राशन "चावल और आटा" (कर्मचारियों के राशन दर के अनुसार)

(2) चाय "मुफ्त" (फिर भी मुझे एक महीने का राशन मिलना बाकी है)

(3) जलाऊ लकड़ी "मुफ्त (साल के अगले महीनों के लिए पहले से ही मिलना बाकी है)।

इस मामले में आपकी शीघ्र कार्रवाई से मुझे खुशी होगी। शीघ्र पुष्टि का अनुरोध है।

साभार

एन के गांगुली

2nd क्लर्क

24 दिसंबर, 1966 को प्रत्यर्थी ने अधिनियम की धारा 33ए के तहत औद्योगिक न्यायाधिकरण के समक्ष एक शिकायत दायर की, जिसमें अपीलार्थी पर अधिनियम की धारा 33 के प्रावधानों के उल्लंघन का आरोप लगाया गया और मामले में निर्णय के लिए प्रार्थना की गई। 27 जून, 1967 को, जब अधिनियम की धारा 33 (2) (बी) के तहत इसका मूल आवेदन अभी भी लंबित था, अपीलार्थी ने औद्योगिक न्यायाधिकरण में एक आवेदन किया जिसमें अनुरोध किया गया कि उक्त आवेदन को अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के तहत एक के रूप में माना जाए। इस आवेदन को संदर्भ की सुविधा के लिए नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया हैः -

"1. वह आवेदन औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 (2) (बी) में आवेदक द्वारा अनजाने में की गई तकनीकी त्रुटि थी।

2. यह कि आवेदन को पढ़ने से स्पष्ट रूप से संकेत मिलेगा कि प्रबंधन वास्तव में अधिनियम की धारा 33 (3) के प्रावधानों का पालन करना चाहता है, न कि उक्त अधिनियम की धारा 33 (2) का, हालांकि आवेदन को इस रूप में वर्णित किया गया है।

3. यहां तक कि श्री एन. के. गांगुली को संबोधित 10 नवंबर, 1966 के प्रबंधन के पत्र से भी यह संकेत मिलेगा कि आई. डी. अधिनियम की धारा 33 (3) के तहत कार्रवाई की जा रही थी।

इसलिए यह प्रार्थना की जाती है कि माननीय न्यायाधिकरण आवेदन को औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 3 (3) और इसके लिए आदि के रूप में माने।

10 जुलाई, 1967 के अपने आदेश द्वारा, औद्योगिक न्यायाधिकरण के पीठासीन अधिकारी ने अधिनियम की धारा 33 (2) के तहत प्रबंधन के मूल आवेदन को अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के तहत एक के रूप में मानने से इनकार कर दिया और इसे यह मानते हुए अस्वीकार कर दिया कि प्रबंधन ने प्रतिवादी को बर्खास्त करने में अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन किया था, जो कि 'न्यायाधिकरण से अनुमति प्राप्त किए बिना' एक संरक्षित कर्मचारी था। इस आदेश से व्यथित प्रबंधन ने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दायर किया जिसमें औद्योगिक न्यायाधिकरण के 10 जुलाई, 1967 के उपरोक्त आदेश को रद्द करने के लिए प्रमाण पत्र या आदेश पत्र या कोई अन्य उपयुक्त रिट जारी करने की मांग की गई थी, लेकिन इसे इस टिप्पणी के साथ खारिज कर दिया गया कि बर्खास्तगी की सजा पहले ही अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के प्रावधानों का पालन किए बिना दी जा चुकी है, एक पूर्व पोस्ट फैक्टो अनुमति नहीं दी जा सकती है। यह इस आदेश के खिलाफ है कि प्रबंधन इस अदालत में अपील करने आया है।

अपील के समर्थन में उपस्थित होते हुए, श्री नरीमन ने आग्रह किया है कि हालांकि यह एक औद्योगिक न्यायाधिकरण के लिए अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) द्वारा अनुध्यात अनुमति को रोकने के लिए खुला हो सकता है यदि वह पाता है कि कोई नियोक्ता किसी कर्मचारी की बर्खास्तगी को उचित ठहराते हुए प्रथम दृष्टया मामला बनाने

में सक्षम नहीं है या यदि वह पाता है कि यह स्थापित करने के लिए सामग्री है कि नियोक्ता अनुचित श्रम व्यवहार या उत्पीड़न का दोषी था, तो औद्योगिक न्यायाधिकरण के लिए तत्काल मामले में यह ठहराने का कोई औचित्य नहीं था कि अपीलार्थी ने अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के प्रावधानों का उल्लंघन किया था या 10 नवंबर, 1966 को अपने मूल आवेदन को धारा 33 (3) के तहत एक के रूप में मानने के लिए अपीलार्थी के अनुरोध को स्वीकार करने से इनकार कर दिया था।

हम श्री नरीमन द्वारा की गई दलीलों में काफी बल पाते हैं। मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ, विशेष रूप से ऊपर पुनः प्रस्तुत किए गए पत्राचार के रेखांकित हिस्से, यानी अपीलार्थी का 10 नवंबर, 1966 को प्रत्यर्थी को लिखा गया पहला पत्र, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया था कि चूंकि बाद वाले को उचित जांच के बाद दोषी पाया गया था, इसलिए उसे कंपनी की सेवा से बर्खास्त कर दिया जाएगा, लेकिन सजा को अधिनियम की धारा 33 के तहत सक्षम प्राधिकारी के आदेशों के लंबित रहने तक लागू नहीं किया जाएगा और इस बीच वह निलंबन में रहेगा, और प्रत्यर्थी का स्वयं का 17 नवंबर, 1966 का आवेदन प्रबंधन को उसकी सेवा से जुड़े राशन आदि के विशेषाधिकारों का लाभ उठाने की अनुमति के लिए इस याचिका पर कि उसे 'अभी तक' खारिज नहीं किया गया था, और साथ ही औद्योगिक न्यायाधिकरण को 10 नवंबर, 1966 के अपीलार्थी के आवेदन के पैराग्राफ 10 के अंतिम भाग में इस आशय के दावे कि प्रत्यर्थी कर्मचारी को सूचित किया गया था कि अपीलार्थी ने निर्णय लिया था कि उसे स्थायी आदेशों के खंड 10 (ए) (2) के तहत कदाचार के लिए बर्खास्त किया जाना चाहिए, लेकिन जब तक न्यायाधिकरण की अनुमति प्राप्त नहीं होती, वह निलंबन के तहत होगा, यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी को खारिज नहीं किया था, बल्कि केवल खारिज करने का फैसला किया था और औद्योगिक न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय इसके विपरीत कटौती करने में स्पष्ट रूप से गलत थे।

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि औद्योगिक न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय दोनों ने अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के तहत अपने मूल आवेदन को एक के रूप में मानने के लिए अपीलार्थी की प्रार्थना की अस्वीकृति को सही ठहराने के लिए इधर-उधर कुछ छिटपुट शब्दों को दबाने की कोशिश की और ऐसा करते हुए आवेदन के वास्तविक सार और सार से चूक गए। न्याय प्रदान करने के कर्तव्य के लिए आरोपित न्यायालयों को यह याद रखना होगा कि यह मामले का रूप नहीं है, बल्कि इसका सार है जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए और पक्षकारों को उनके मामलों के संचालन में उनके द्वारा की गई अनजाने में त्रुटियों के लिए दंडित नहीं किया जा सकता है। वेस्टर्न इंडिया मैच कंपनी लिमिटेड बनाम उनके कर्मचारी मामले में इस न्यायालय द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियां इस संबंध में विपरीत हैंः-

पुनः, जैसा कि न्यायालयों के समक्ष आने वाले अधिकांश प्रश्नों में होता है, यह सार है जो मायने रखता है न कि रूप; और पदार्थ के निर्धारण के लिए प्रासंगिक प्रत्येक तथ्य और परिस्थिति पर सावधानीपूर्वक ध्यान देने की आवश्यकता है।

न्यायालयों के लिए यह याद रखना भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि न्याय को बढ़ावा देने के लिए कभी-कभी उचित मामलों में अभिवचनों का अर्थ बहुत तकनीकी रूप से या पांडित्यपूर्ण तरीके से नहीं बल्कि निष्पक्ष और यथोचित रूप से निकालना आवश्यक है।

इसलिए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता और पटना इलेक्ट्रिक सप्लाई कंपनी लिमिटेड पटना बनाम बाली बाई और अन्य में इस न्यायालय की टिप्पणियों के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए इस प्रभाव के लिए कि श्रम न्यायालय और न्यायाधिकरण पक्षकारों को अनुमति देने के लिए सक्षम हैं, जब वे किसी अप्रत्यक्ष उद्देश्य से प्रेरित नहीं होते हैं और न्याय के हितों को कम करने के लिए अपनी दलीलों

में संशोधन नहीं करते हैं, तो हमारा विचार है कि वर्तमान एक विशिष्ट रूप से उपयुक्त मामला है जिसमें औद्योगिक न्यायाधिकरण को अपीलार्थी के मूल आवेदन को, जो वास्तव में और अनुमति के लिए सार में अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के तहत एक के रूप में मानना चाहिए और निम्नलिखित बिंदुओं पर जाने के बाद कानून के अनुरूप इसका निपटारा करना चाहिएः -

1. क्या यह निर्णायक रूप से साबित होता है कि उपरोक्त चेक संख्या 53 पर बोरपुखुरी चाय बागान के प्रबंधक के हस्ताक्षर जाली थे?

2. अपीलार्थी द्वारा उक्त चेक के संबंध में पुलिस को दी गई उस रिपोर्ट का क्या हुआ और उस रिपोर्ट के परिणाम का कथित जालसाजी की सच्चाई या अन्यथा पर क्या प्रभाव पड़ा?

3. क्या प्रत्यर्थी को बर्खास्त करने का प्रथम दृष्टया मामला अपीलार्थी द्वारा बनाया गया है?

4. क्या प्रत्यर्थी को बर्खास्त करने का अपीलार्थी का निर्णय प्रामाणिक था या यह किसी अनुचित श्रम अभ्यास या उत्पीड़न का परिणाम था?

5. क्या प्रतिवादी जांच के समापन और न्यायाधिकरण के अंतिम आदेश के बीच के अंतराल में किसी भी भुगतान का हकदार था?

तदनुसार, हम अपील को स्वीकार करते हैं, औद्योगिक न्यायाधिकरण और उच्च न्यायालय के उपरोक्त आदेशों को रद्द करते हैं और अपीलार्थी के 10 नवंबर, 1966 के उपरोक्त आवेदन को अधिनियम की धारा 33 (3) (बी) के तहत एक के रूप में मानने के निर्देश के साथ मामले को पूर्व को भेजते हैं और ऊपर दिए गए बिंदुओं पर जाने के बाद आदेश की प्राप्ति के छह महीने से अधिक के अधिकतम प्रेषण के साथ इसका

निपटारा करते हैं। पक्षकारों को उपरोक्त बिंदुओं के संबंध में ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाएगी जो वे चाहें। इस अपील की लागत का भुगतान अपीलार्थी द्वारा दूसरे प्रत्यर्थी कर्मचारी को किया जाएगा, जिसकी राशि रु 1500/-है। सी. एम. पी. 5411/71 में क्रम बना रहेगा।

एस आर अपील को अनुमति दी गयी।

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक कैलाश पूनिया द्वारा किया गया है ।

अस्वीकरण - यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा मे अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा एवं निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।